

## गणतंत्र दिवस, संप्रभुता और युवा

प्रेम सिंह

(गणतंत्र दिवस और संप्रभुता का नरेटिव, जो 1991 में नई आर्थिक नीतियों के लागू होने और 1992 में बाबरी मस्जिद के तोड़े जाने के साथ बदलना शुरू हुआ था, 75 वें गणतंत्र दिवस पर अपनी मंजिल पर पहुंच गया है। अब कारपोरेट-कम्प्यूनल गठजोड़ भारतीय गणतंत्र और संप्रभुता को परिभ्राषित करता है। इस पेराडाइम शिफ्ट का चारों गुणगान हो रहा है। यह पेराडाइम शिफ्ट की चारों तरफ प्रशंसा हो रही है। यह टिप्पणी 68वें गणतंत्र दिवस - 26 जनवरी 2017 - की है। युवाओं के विचार के लिए एक बार फिर जारी की गई है।)

26 जनवरी 1950 को भारत का संविधान लागू होता है और हम दुनिया के मंच पर एक संप्रभु गणतंत्र के रूप में प्रवेश करते हैं। तब से हर 26 जनवरी को गणतंत्र दिवस मनाया जाता है, जो हमारी संप्रभुता का उत्सव है। गणतंत्र दिवस पर राज्यों एवं विभागों की रंगारंग झँकियां निकाली जाती हैं। लेकिन वह मुख्यतः देश की सैन्य शक्ति के प्रदर्शन का उत्सव होता है। गौर करें तो पाएंगे कि 1991 में नई आर्थिक नीतियां लागू होने - यानी शासक वर्ग द्वारा देश की आर्थिक संप्रभुता के साथ समझौता करने - के बाद से गणतंत्र दिवस का उत्सव ज्यादा से ज्यादा प्रदर्शनकारी होता गया है। पिछले करीब तीन दशकों में जैसे-जैसे आर्थिक संप्रभुता के साथ राजनीतिक संप्रभुता पर भी समझौता होता गया, राजपथ पर गणतंत्र दिवस का उत्सव प्रदर्शन की पराकाष्ठा पर पहुंचता गया।

सवाल है कि गणतंत्र दिवस पर प्रदर्शनकारिता के परवान चढ़ने के साथ क्या हमारी संप्रभुता भी परवान चढ़ी है? नवउदारवाद के दौर में किए गए समझौतों और फैसलों पर सरसरी तौर पर नजर डालने से ही पता चल जाता है कि शासक वर्ग ने सरकारों को संविधान, जिसमें हमारी संप्रभुता निहित है, की धुरी से उतार कर नवउदारवाद की पुरोधा वैश्विक पूँजीवादी आर्थिक संस्थाओं - विश्व बैंक, अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व व्यापार संगठन आदि - की धुरी पर बिठा दिया है। ये समझौते और फैसले वैश्विक पूँजीवादी आर्थिक संस्थाओं के आदेशों के मातहत देशी-विदेशी कारपोरेट घरानों, बहुराष्ट्रीय कंपनियों के हितों के लिए किए गए हैं। पिछले 70 सालों में देश में कुछ भी नहीं होने की बात करने वाले मौजूदा नेतृत्व ने अद्वाई साल में देश की संप्रभुता को गिरवीं रखने की दिशा में पिछले नेतृत्व से ज्यादा तेजी दिखाई है। आजादी और उसे हासिल करने की कुर्बानियों का मूल्य नहीं समझने के चलते संप्रभुता खोने की बात उन्हें नहीं सालती। नरसिंहा राव, मनमोहन सिंह और सोनिया गांधी के साथ भी यही समस्या थी। तभी उन्होंने आजादी के संघर्ष की पार्टी को आजादी गिरवीं रखने वाली पार्टी में तब्दील कर दिया।

शासक वर्ग सेना की मजबूती को संप्रभुता की मजबूती के रूप में पेश करता है। लेकिन रक्षा-क्षेत्र में सौ प्रतिशत विदेशी निवेश की छूट और अमेरिका को दी गई सुरक्षातंत्र में घुसपैठ की छूट के चलते यह तसल्ली झूठी है। सरकारें, खास कर मौजूदा सरकार, राष्ट्रभक्ति का उन्माद पैदा करके देश की जनता को अभिमत करती हैं कि वह सरकार के संवैधानिक संप्रभुता के प्रति द्वोह को नहीं देख-समझ पाए। राष्ट्रभक्ति का उन्माद केवल पाकिस्तान के खिलाफ पैदा किया जाता है, जिसे परास्त करने की क्षमता भारतीय सेना में हमेशा रही है। भारत का कई हजार वर्ग किलोमीटर क्षेत्र चीन के कब्जे में है। शासक वर्ग उसके सैन्य समाधान के लिए राष्ट्रभक्ति का उन्माद पैदा नहीं करता। कुल मिला कर गणतंत्र दिवस की परेड सम्मिलित रूप से शासक वर्ग, उसका हिस्सा नागरिक समाज और साधरण जनता के लिए संप्रभुता खोने से पैदा होने वाले खोखलेपन को भरने की कवायद बन जाती है। संप्रभुता पर नवसामाज्यवादी शिकंजा जितना कसता जाएगा, यह कवायद भी अधिकाधिक बढ़ती जाएगी। उग्र राष्ट्रवाद उग्रतर होता जाएगा।

यह स्थिति बेहद उलझी और निराश करने वाली है। लेकिन लंबे संघर्ष से हासिल की गई संप्रभुता को बचाने और मजबूत बनाने की बड़ी चुनौती भी पेश करती है। खास कर देश के युवाओं के सामने। भारत में युवाओं का कोई एक धरातल नहीं है। सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षिक स्तर पर कई धरातल हैं। इन सबके अपने-अपने सपने और संकल्प हैं। इन तीनों धरातलों पर शिक्षित, अर्द्धशिक्षित और अशिक्षित बेरोजगार युवाओं की एक विशाल फौज है। युवाओं का राष्ट्र को लेकर और राष्ट्र में अपनी हिस्सेदारी को लेकर अलग-अलग नजरिया है। राष्ट्रीय संप्रभुता पर नवसामाज्यवादी हमले को लेकर भी युवाओं का नजरिया एक जैसा नहीं है। हालांकि उनमें ज्यादातर भारत को महाशक्ति देखना चाहते हैं। बल्कि कुछ तो मानते हैं कि भारत महाशक्ति बन चुका है।

युवाओं को समझना होगा कि संप्रभुता खोने वाला देश कभी महाशक्ति नहीं हो सकता। वे यह कठिन कल्पना कर सकते हैं कि नवउदारीकरण के तहत तेजी से किए जा रहे निजीकरण के चलते भविष्य में गणतंत्र दिवस की झांकियों में निजी क्षेत्र की झांकियां शामिल हो सकती हैं। सौ प्रतिशत विदेशी/निजी निवेश सेना की परेड में भी अपनी झलक दिखा सकता है। उसे सोचना है कि क्या उसे यह सब मंजूर होगा? क्या वह नवसामाज्यवाद के तहत बन रहे नवउदारवादी राष्ट्र में हिस्सेदारी करेगा, या संप्रभु भारतीय राष्ट्र में जिम्मेदारी निभाएगा? देश के जागरूक युवा नई तैयारी और समझदारी से संप्रभुता बचाने की भूमिका तय करेंगे, तभी वह बचेगी।

(समाजवादी आंदोलन से जुड़े लेखक दिल्ली विश्वविद्यालय के पूर्व शिक्षक और भारतीय उच्च संस्थान, शिमला के पूर्व फेलो हैं)